सिनेमा में बदलती नारी छवि

डॉ. दीपिका घई

हिन्दी विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्ज़, यमुनानगर

संक्षेपिका

साहित्य के समान सिनेमा को भी यदि समाज का दर्पण कहा जाये तो इसमे कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी । सिनेमा चाहे व्यवसाय के लिए हो, मनोरंजन के लिए हो अथवा कला के लिए उसमें तत्कालीन समाज की अभिव्यक्ति किसी न किसी रूप में अवश्य होती है । आधुनिक युग में सिनेमा मनोरंजन का सबसे लोकप्रिय एवं सशक्त माध्यम बन गया है परन्तु सिनेमा से केवल मनोरंजन ही नहीं होता बल्कि फिल्मों की कहानी के माध्यम से समाज को जागरूक भी किया जाता है ।

साहित्य की भांति सिनेमा भी अपनी प्राणशक्ति समाज से प्राप्त करता है । समाज में नारी की यथार्थ स्थिति को सिनेमा में भी किसी न किसी रूप में प्रस्तुत किया जाता है। सिनेमा के सौ से अधिक वर्षो के इस सफर में नारी भूमिका का सफर भी अद्भुत रहा है। दशक दर दशक नारी की भूमिका के विभिन्न रंग सिनेमा के परदे पर देखने को मिलते रहे हैं । हिन्दी फिल्मों में नारी की भूमिका चाहे मुख्य रही हो या गौण फिर भी अनेक अभिनेत्रियों ने अपने अभिनय द्वारा दर्शकों के मन पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है।

आज की नायिकाओं में इतना दमखम है कि वे अकेले अपने बलबूते पर फिल्म को सफल बनाने का मादा भी रखती हैं और यह नारी सशक्तिकरण का स्वर्णिम पहलू है।

मुख्य-शब्दः सिनेमा, नारी, साहित्य, मनोरंजन

भूमिका

समय परिवर्तनशील है, वह आबाध गति से आगे बढ़ता रहता है । प्राचीन काल में मानव जीवन आदिम युग जैसा था तो आज का मानव अत्याधुनिक हो गया है । पुराने समय में मनुष्य के पास ज्यादा धन–दौलत, भोग विलास के ज्यादा साधन नहीं थे, परन्तु शान्ति थी आज उसके पास भोग विलास के लिए बहुत कुछ है तो मन अशान्त है । समय निर्बाध आगे बढ़ता रहता है वह कभी किसी के लिए न रुका है और न ही रुकता है । फफिल्मों को आमतौर पर मनोरंजन का माध्यम माना जाता है । अध्किांश फिल्मकार यही दावा करते हैं कि उनका मकसद स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करना है । लेकिन फिल्में एक सामाजिक उत्पाद भी हैं और एक सांस्कृतिक उत्पाद भी । फिल्मों के माध्यम से जो जीवन प्रस्तुत किया जाता है वह जीवन चाहे जितना काल्पनिक और अयथार्थ क्यों न हो, लेकिन उसका अपने समय और समाज से किसी न किसी तरह का रिश्ता जरूर होता है। वह वास्तविकता के संदर्भ में ही काल्पनिक और अयथार्थ होता है । ऐसा होता हुआ ही वह वास्तविकता के साथ अपना रिश्ता तय करता है । फिल्म या किसी भी कला माध्यम के द्वारा ऐसी कल्पना और ऐसा अयार्थ प्रस्तुत करना संभव ही नहीं है जिसका वास्तव से कोई संबंध न हो । इसलिए फिल्में के बारे में बात करते हुए यह स्वाभाविक है कि उसमें व्यक्त जीवन और समाज के उस परिप्रेक्ष्य को समझा जाए जिससे वह प्रेरित है वह प्रेरणा चाहे)णात्मक हो या घनात्मक ।[1] फिल्मकार भी एक सामाजिक प्राणी है, समय की गति के अनुसार उसे भी बदलना पड़ता है, फिल्में चाहे मनोरंजन का साधन हो परन्तु समय के अनुसार और दर्शकों के स्वादानुसार उसे भी अपनी फिल्मों के विषय का चयन करना होता है । जिस प्रकार साहित्यकार अपने परिवेश से प्रेरित और प्रभावित होकर साहित्य रचना करता है, उसी प्रकार फिल्मकार भी दर्शकों की नब्ज को पहचान कर फिल्मों का निर्माण करता है । समाज में व्याप्त बुराईयों – अच्छाईयों को फिल्मकार अपनी फिल्मों में प्रस्तुत करता है, दर्शक उन्हें पसन्द करते हैं तो फिल्म सफल हो जाती है और अगर कहानी दर्शकों को पसन्द न आये तो लाखों करोड़ों रूपयों की लागत से बनी फिल्म भी असफल हो जाती है। अपने आरम्भिक दौर में सिनेमा का स्वरूप यह नहीं था जो आज हमें दिखता है, फिल्मांकन, तकनीक, पात्रा, कहानी आदि सभी क्षेत्राों में तब से लेकर अब तक के सिनेमा में आशातीत परिवर्तन हुए हैं ।

फसिनेमा का जन्म सिर्फ मनोरंजन परोसकर पैसा कमाने के लिए नहीं हुआ है । सदा से सिनेमा के मजबूत कंधें पर देशकाल और सामाजिक दायित्व का दोहरा बोझ भी हुआ करता है । अपने आरम्भिक काल से ही सिनेमा अपने चमक–दमक भरे अंदाज के साथ–साथ अपनी सरल और प्रभावशाली भाषा के कारण दर्शकों के लिए आकर्षण का केन्द्र रहा है । ब्रिटिश साम्राज्यवाद और सामाजिक कुरीतियों के विरोध में सिनेमा का, साहित्य और नाटक की तरह सामाजिक परिवर्तन के ध्येय से एक तेज दो धरी तलवार की तरह इस्तेमाल किया गया ।[2] समाज की गति के अनुरूप सिनेमा की

गति, स्वरूप भी बदला है । आज के सिनेमा को देखें तो पायेंगे कि फिल्मी सितारों की अहमियत जितनी बढ़ गई है वैसी आरम्भिक काल में नहीं थी । असंख्य नायक–नायिकाएं फिल्मों में काम कर रहे हैं, पैसा कमा रहे हैं, नाम कमा रहे हैं और प्रसि(इतनी है कि न केवल देश में अपितु विदेशों में भी लाखों–करोड़ों की तादाद में उनको चाहने वाले हैं । कई बार तो नायक–नायिका के नाम से ही फिल्मों का सफल–असफल होना तय हो जाता है । बदलते समाज के अनुरूप आज फिल्मों में महिलाएं पुरूषों को बराबरी की टक्कर दे रहीं हैं । न केवल अभिनय अपितु फिल्म निर्माण, कहानी लेखन, नृत्य निर्देशन फिल्म से जुड़े सभी क्षेत्रों में महिलाएं काम भी कर रही हैं और सफलता भी प्राप्त कर रही हैं ।

उद्देश्य एवं शोध प(ति

यह शोध पत्रा आधुनिक परिवेश में हिन्दी सिनेमा में नारी की बदलती छवि की विवेचना करेगा । सौ वर्ष से अध्कि सिनेमा जीवन में नारी छवि कितनी बदली है इसमें इसका वर्णन किया गया है । नारी समाज का एक अभिन्न अंग है, नारी के बिना समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती है और यही बात सिनेमा पर भी लागू होती है । सिनेमा के परिवेश के साथ–साथ नारी की भूमिका में भी परिवर्तन होते रहे हैं । जिस प्रकार आदि काल से आधुनिक काल तक समाज में नारी की स्थिति बदलती रही है, उसी प्रकार सिनेमा में भी नारी की स्थिति में काफी उतार चढ़ाव रहे हैं । वैदिक काल में समाज में नारी को जहां देवी का दर्जा दिया गया , वहीं मध्यकाल में उसे भोग विलास की वस्तु माना गया । पाश्चात्य शिक्षा और सुधर आन्दोलनों के फलस्वरूप उसकी स्थिति में बहुत बदलाव आये, उसे फिर से समाज में सम्मान प्राप्त होने लगा, परन्तु आधुनिक युग में उसकी स्थिति मिली–जुली सी है क्योंकि एक तरफ वह खेल जगत, सिनेमा, साहित्य, विज्ञान जगत में नित नई ऊँचाईयों को छू रही है, तो दूसरी तरफ दुष्कर्म, छेड़छाड़, शोषण, भ्रूण हत्या जैसे उत्पीड़न का भी शिकार है । समाज के साथ–साथ सिनेमा में भी नारी की स्थिति एक सी नहीं रही है, फिल्मों में कभी उसे पारिवारिक चक्की में पीसती हुई मां, बेटी, पत्नी आदि की भूमिका में दिखाया गया है तो कभी समाज के शोषण की शिकार पीड़िता के रूप में, कहीं पुरूष समाज की ज्यादती के कारण घुटन भरी जिन्दगी को जीती हुई नारी सिनेमा में दिखाई दी है तो कभी इस ज्यादती का भरसक विरोध कर समाज को एक नई दिशा दिखाती नायिका की भूमिका निभाती दिखाई देती है ।

वर्ष 2013 में हिन्दी सिनेमा के सौ वर्ष पूरे हो चुके हैं, इन सौ वर्षो में सिनेमा में भारी परिवर्तन हुए हैं । कभी फिल्मों में नारी को दोयम दर्जे की भूमिका दी गई तो कभी नारी को केवल शो पीस की तरह इस्तेमाल किया गया तो किसी दौर में नारी केन्द्रित फिल्मों का निर्माण भी हुआ । समाज के अनुरूप फिल्मों में भी नारी की स्थिति अलग–अलग रही है । फ्यह वर्ष सिनेमा का शताब्दी वर्ष है, सौ वर्षो की इस फिल्म में नारी के प्रस्तुतीकरण और उसके समाज पर प्रभावों पर काफी कुछ लिखा और बोला गया। आलोचनाओं और प्रशंसाओं के बीच एक सत्य हमेशा मौजूद रहा है कि फिल्मों की शुरूआत से ही नायिकाओं का अपने समय के नारी समाज पर गहरा प्रभाव रहा है । आम नारी सदैव ही अपने दौर की नायिकाओं से आकर्षित और प्रभावित रही है । यह प्रभाव चाहे नायिकाओं द्वारा निभाए पात्राों का हो या उनकी जीवन–शैली का । बीसवीं सदी में समाज में अनेक बदलाव हुए और कई कानून बने, जब इनका विश्लेषण किया जाए तो यह साफ तौर पर नजर आयेगा कि किस तरह से सिनेमा ने बेमेल विवाह, विध्वा विवाह, स्त्राी शिक्षा, समानता का अध्किार, आर्थिक स्वावलंबन तथा तलाक जैसे गंभीर विषयों को संवेदनशीलता के साथ पेश कर नारी समाज का साथ देकर उसके हक की लड़ाई को बल दिया ।[3]

बदलते कालखण्ड में फिल्मों के विषयों में बहुत परिवर्तन हुए हैं, थ्रीडी तकनीक पर फिल्में बनने लगी हैं, प्राचीन ऐतिहासिक और धर्मिक विषयों को लेकर उनका नवीनीकरण किया जा रहा है, यथार्थ विषयों को लेकर फिल्में बनाई जा रही हैं, हमारे समाज की प्रसि(हस्तियों चाहे वह राजनीति, सामाजिक या खेल जगत से हो, उनके जीवन पर आधरित फिल्में भी बन रही हैं । इन विषयों में एक सर्वचर्चित और प्रमुख विषय यह भी है कि नारी केन्द्रित फिल्मों का निर्माण भी किया जा रहा है जोकि समाज के विकास के लिए एक अच्छा संकेत है । चाहे फिल्म में नारी शोषण, समस्या या उसके विरोध को ही दिखाया जा रहा है, परन्तु यह कहीं न कहीं समाज में नारी की बदलती स्थिति का ही संकेत है ।

सिनेमा में नारी विमर्श

भारतीय सिनेमा का सफर कई दशकों को पार करता हुआ अपने सौ वर्ष भी पूरे कर चुका है । यह सफर स्टिल फोटोग्राफी से आरम्भ होकर अवाक, सवाक, ब्लैक एण्ड व्हाइट, क्लर और अलग–अलग पड़ावों से गुजरता हुआ डिजिटल सिनेमा युग तक पहुंच गया है । अगर हिन्दी सिनेमा को नारी सापेक्ष नजरिये से देखें तो सिनेमा में नारी चित्राण भी कई चरणों से होकर गुजरा है । सामाजिक परिस्थितियों, मूल्यों के बदलाव के साथ–साथ नारी चरित्राों के प्रति दृष्टिकोण में भी बहुत परिवर्तन हुआ है, परन्तु यह परिवर्तन आकस्मिक न होकर आहिस्ता–आहिस्ता आया है । सिनेमा के अब तक के सफर पर अगर नजर डाली जाये तो दिखाई देता है कि हिन्दी सिनेमा के आरम्भिक काल में कई फिल्में नारी सशक्तिकरण पर आधरित कही जा सकती है इन फिल्मों में **इंग्लैंड रिटर्न** ;1921द्ध **टाइपिस्ट गर्ल** ;1926द्ध **गुण सुंदरी** ;1927द्ध **विश्वमोहिनी** ;1929द्ध **मजदूर** ;1934द्ध **अछूत कन्या** ;1936द्ध **दुनिया न माने** ;1937द्ध **अबला की शक्ति** ;1940द्ध **औरत** ;1940द्ध आदि फिल्में थी जिनमें नारी के प्रति समाज की सोच को अलग रूप में प्रस्तुत किया गया । आजादी के

बाद नारी केन्द्रित फिल्मों का निर्माण आरम्भ हो गया था । **मदर इंडिया** ;1957द्ध **सुजाता** ;1959द्ध **बंदिनी** ;1963द्ध **गाइड** ;1965द्ध **तीसरी कसम** ;1966द्ध **आंधि** ;1974द्ध **उमराव जान** ;1981द्ध **बाजार** ;1982द्ध **मिर्च मसाला** ;1985द्ध आदि फिल्मों से आरम्भ होकर आज डिजिटल सिनेमा के युग तक नारी केन्द्रित फिल्मों का यह सफर अनवरत जारी है । पारिवारिक, सामाजिक, राजनीति, धर्म, खेल जगत सभी क्षेत्राों में नारी केन्द्रित भूमिका को लेकर फिल्मों का निर्माण किया जा रहा है ।

फ्बीसवीं शताब्दी के आखिरी दशक के सिनेमा में भी महिलाओं के मुद्दों पर परम्परा और आधुनिकता में द्वंद्व दिखाई देता है । जहां एक तरफ स्त्राी जीवन के अनछुए विषयों पर प्रगतिशील फिल्में देखने को मिलती हैं, वहीं दूसरी तरफ परम्परागत पितृसत्तात्मक सोच की हिमायती फिल्मों की भी इस दौर में कमी नहीं हैं । इसी मिले–जुले रूख के साथ हिन्दी सिनेमा ने इक्कीसवीं सदी में प्रवेश किया । इक्कीसवें दशक में स्त्राी के लिए बनी हुई तमाम सीमाओं को तोड़ा है । ऐसी फिल्मों में हम **चांदनी बार** ;2001द्ध **जुबेदा** ;2001द्ध **फिलहाल** ;2002द्ध **मातृभूमि** ;2003द्ध **पिंजर** ;2003द्ध **पेज थ्री** ;2005द्ध **डोर** ;2006द्ध **आजा नच ले** ;2007द्ध **निःशब्द** ;2007द्ध **फैशन** ;2008द्ध **लक बाई चांस** ;2009द्ध **रात गई बात गई** ;2009द्ध **लव, सेक्स और धेखा** ;2010द्ध **नो वन किल्ड जेसिका** ;2011द्ध **टर्निंग थर्टी** ;2011द्ध **सात खून माफ** ;2011द्ध **हिरोईन** ;2012द्ध **अईया** ;2012द्ध **इन्कार** ;2013द्ध **बी.ए. पास** ;2013द्ध **कहानी** ;2013द्ध **बोबी जासूस** ;2014द्ध जैसी फिल्में देख सकते हैं । 21वीं सदी की ये फिल्में इस बात को प्रमाणित करती हैं कि भूमंडलीकरण के दौर में भी नारी की विडम्बनाओं, आकांक्षाओं, उद्देश्यों और समस्याओं पर फिल्में बनाना जारी रहा । आज भले ही फिल्म निर्माण एक व्यवसाय बन गया है किन्तु सामाजिक सरोकार, जीवन मूल्य आज भी इसमें व्याप्त है। नारी सदियों से अपनी आजादी के लिए अपनी आवाज बुलंद करती आई है उसकी आवाज की बुलंदियों का आगाज सिनेमा में और तीव्र गति से हुआ है । साथ ही शांत बैठी और गुमनाम दुनियाँ में खोई स्त्रियों को सशक्त करने का कार्य भी सिनेमा ने किया है। समाज में बदलाव विभिन्न माध्यमों से आहिस्ता–आहिस्ता आते हैं जिनमें सिनेमा ने भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।[4]

इस परिवर्तनशील समाज में नारी की भूमिका में भी अनेक परिवर्तन आये हैं जिनका प्रभाव हम हिन्दी सिनेमा पर भी देख सकते हैं । देश की राजनीति, संस्कृति, अर्थव्यवस्था, अन्य क्षेत्राों में नारी की उल्लेखनीय भागीदारी देखी जा सकती है फिल्मों में भी इन नारी विषयक मुद्दों को लेकर अनेक निर्माताओं ने नारी केन्द्रित फिल्मों का निर्माण किया है । यही नहीं केवल पात्रा के रूप में नहीं बल्कि फिल्म निर्माण के अन्य क्षेत्राों में भी नारी अपना सक्रिय योगदान दे रही हैं । सिनेमा के निर्देशन, संगीत, लेखन, मेकअप आर्टिस्ट आदि क्षेत्राों में स्त्रियां बराबर काम कर रही हैं । कल्पना लाजमी, अर्पणा सेन, तनुजा चन्द्रा, मीरा नायर, फराह खान, जोया अख्तर आदि फिल्म निर्देशन में आकर सफल फिल्मों का निर्माण कर रही हैं । जीवन कहानी की तरह फिल्मी कहानी भी नारी के बिना अपूर्ण है, अधूरी है ।[5]

इस बदलते कालखण्ड में फिल्मों का केन्द्र केवल प्रेम कहानी न रहकर अलग–अलग बन गया जिसमें किसी सामाजिक समस्या को आधर बनाया गया या किसी सच्ची घटना को लेकर फिल्म बनाई गई अथवा इस अत्याधुनिक कहे जाते वाले समाज में से किसी नये मुद्दे को उठाकर फिल्मों का निर्माण किया जा रहा है ।

सिनेमा एक सशक्त माध्यम है जो समाज का पथप्रदर्शक भी है, मनोरंजन का साध्न है और ज्ञान देने वाला गुरू भी । सिनेमा दर्शकों के लिए अलग–अलग भूमिका निभाता है । बहुरंगी मानव जीवन के समान ही सिनेमा के भी विभिन्न रंग है । एक ही समय सीमा में हमें हिन्दी सिनेमा के अलग–अलग रंगों के दर्शन हो जाते हैं । 2007 में बनी फिल्म **'जब वी मेट'** एक अलग ही रंग की फिल्म है जिसमें परिवार, मूल्य, मनोरंजन, प्यार हर रंग बखूबी दिखाया गया है । फिल्म की नायिका गीत ;करीना कपूरद्ध ने फिल्म में बिंदास भूमिका अदा की है जो कि दर्शकों पर अपनी अलग ही छाप छोड़ती है । नायिका गीत अचानक ही कहानी के नायक शाहिद कपूर से मिल जाती है जिसकी जिन्दगी बदरंग हो चुकी थी परन्तु गीत से मिलने के बाद उसकी जिन्दगी में एक तूफान सा आ जाता है गीत का साथ देते–देते वह उसको प्यार करने लग जाता है परन्तु गीत तो किसी ओर से प्यार करती है परन्तु उसका प्रेमी उसे ठुकरा देता है तब आदित्य ;शाहिद कपूरद्ध उसे सहारा देता है तो वह भी आदित्य को पसन्द करने लगती है और अन्त में दोनों का मिलन हो जाता है । फिल्म में गीत का व्यक्तित्व ऐसा है कि वह अपने आस–पास रहने वालों को हर तरह से आकर्षित कर लेती है । करीना कपूर ने गीत के रोल में शानदार अभिनय कर फिल्म को सफलता दिलाई है । 2008 में प्रदर्शित फिल्म **'जोध अकबर'** एक ऐतिहासिक फिल्म है जिसमें मुगलकालीन भारतीय वातावरण को जीवन्त किया गया है कि किस प्रकार मुगल शासक न केवल राजनीतिक तौर पर भारत पर कब्जा जमाये बैठे थे अपितु भारतीय परिवारों में भी उनकी दखलांदजी थी । इस समय भारत में राजपूत जाति वीर, बहादुर मानी जाती थी और राजपूत स्त्रियां भी अपनी वीरता के लिए प्रसि(थी । फिल्म में अकबर ;)तिक रोशनद्ध और जोध ;ऐश्वर्य रायद्ध की प्रेम कहानी को आधर बनाया गया है । फिल्म में एक राजपूतानी रानी की भूमिकाओं को ऐश्वर्य राय ने पूरे राजसी वैभव के साथ निभाया है जो प्यार करना तो जानती ही है, यु(करना, तलवार चलाना, अपने हक के लिए लड़ना भी बखूबी जानती है । फिल्म में ऐश्वर्य राय ने महारानी जोध बाई का सजीव अभिनय किया है । इस वर्ष एक तरफ तो ऐतिहासिक विषय पर **'जोध अकबर'** जैसी फिल्म का निर्माण हुआ तो दूसरी तरफ अत्याधुनिक विषय को लेकर मधुर भंडारकर ने **'फैशन'** फिल्म का निर्माण किया जिसमें आज की युवा पीढ़ी को आकर्षित करती फैशन और ग्लैमर जगत की चुंध्याती रोशनी के पीछे की सच्चाई से अवगत कराया गया कि

इस जगमगाहट के पीछे कितना अंध्कार छिपा है जो हमारी युवा पीढ़ी को प्रलोभन देकर उनके भविष्य से खिलवाड़ कर रहा है । कहानी की नायिका मेघना माथुर ;प्रियंका चोपड़ाद्ध फैशन जगत में नाम कमाना चाहती है । अपने परिवार का विरोध् करके वह फैशन जगत में आ जाती है परन्तु यहां अपनी पहचान बनाने के लिए उसे कई समझौते भी करने पड़ते हैं । सफलता की सीढ़िया चढ़ते–चढ़ते वह नैतिकता की सीढ़िया उतरती जाती है । नशा, परपुरूषों के साथ रात बिताना, पार्टियों में देर रात तक रहना उसकी दुनिया बन जाता है। धीरे–धीरे वह इस जिन्दगी से उकता जाती है और डिप्रेशन में आ जाती है और अपने घर लौट आती है तब उसके माता–पिता पूरी लगन से उसके आत्मविश्वास को जगाने का प्रयत्न करते हैं और मेघना भी अपने अवसाद से निकल कर अपना कैरियर दुबारा बनाती भी है और शीर्ष पर भी पहुंचती है । फिल्म में प्रियंका चोपड़ा ने फैशन वर्ल्ड की मॉडल और फिर अवसादग्रस्त मेघना का अभिनय कर दोनों प्रकार के पात्रों को जीवन्त बनाया है । यह फिल्म प्रियंका चोपड़ा के कैरियर का मील का पत्थर भी है और आधुनिक युवा पीढ़ी का आदर्श भी कि किस प्रकार यदि आज के युवा अपनी जिन्दगी में पथभ्रष्ट भी हो जाते है तो अगर वे आत्मविश्वास रखते है तो वे अपना मुकाम भी हासिल कर सकते हैं। ये फिल्म उन लड़कियों के लिए प्रेरक है जो सफलता पाने के लिए अपनी इज्जत भी दांव पर लगाने को तैयार हो जाती हैं परन्तु उस प्रकार उन्हें नाकामी और अवसाद ही प्राप्त होता है ।

वर्ष 2011 में आई फिल्म **'द डर्टी पिक्चर'** ऐसी ही एक फिल्म है जहां नारी की छवि को उसकी परम्परागत छवि से हटकर पेश किया गया है, कहानी का केन्द्र पात्रा है रेश्मा/सिल्क ;विद्या बालनद्ध जोकि गांव में तो जरूर रहती है, परन्तु उसके सपने आसमान को छूने के हैं और गांव में रहकर इन सपनों को पूरा करना नामुमकिन है इसलिए वह अपनी शादी से एक दिन पहले ही अपना घर, गांव छोड़कर मुंबई आ जाती है । भटकते और संघर्ष करते–करते वह स्टूडियों तक भी पहुंच जाती है । फिल्म में समुह नृत्य में उसको ठुमका लगाने का मौका भी मिल जाता है, परन्तु फिल्म निर्देशक उसके नृत्य दृश्य को फिल्म से निकाल कर फिल्म प्रदर्शित कर देता है परन्तु फिर से निर्माता की नजर उसके सेक्सी ठुमकों पर पड़ती है और वह दुबारा उस सीन के साथ फिल्म प्रदर्शित करता है और फिल्म सुपरहिट हो जाती हैं । साथ ही सिल्क का फिल्मी कैरियर भी चल पड़ता है । इस सफर के दौरान उसकी जिन्दगी में कई उतार–चढ़ाव आते हैं, अलग–अलग पुरूष भी आते है – इमरान हाशमी, नसीरूदीन शाह, तुषार कपूर, परन्तु वे सभी उसे केवल शोहरत या शारीरिक वासना के लिए इस्तेमाल करते हैं । सिल्क की जिन्दगी में अब शोहरत भी है, पैसा भी परन्तु फिर भी उसकी जिन्दगी में कुछ कमी सी है जिसे वो समझ नहीं पाती और तनाव में आत्महत्या कर अपनी अधूरी चाहत के साथ अपनी जीवनलीला ही समाप्त कर लेती है । इस फिल्म में नायिका को बड़ी ही बोल्ड छवि के साथ पर्दे पर उतारा गया है और अभिनेत्राी विद्या बालन ने बड़े ही बिंदास और स्टाईलिश लुक के साथ इस फिल्म में अभिनय किया है जिसकी छवि दर्शकों के मन में अलग सी बन पड़ी है वे उसके बिंदास सेक्सी अदाओं पर आकर्षित भी होते हैं तो उसके इस बिंदासपन के पीछे छिपी उसकी संवेदनाओं को भी महसूस कर पाते है । विद्या बालन एक ऐसी अभिनेत्राी है जिसने फिल्में तो कम की हैं परन्तु उनकी सभी फिल्में अपने आप में यादगार हैं ।

फ्नारी समस्याओं को केन्द्र में रखकर कथा का ताना–बाना बुनने में हमारे फिल्मकारों की रूचि बड़ी पुरानी है । इसी कारण से एक दौर विशेष में नारी प्रधन फिल्मों की बहुतायत से निर्माण हुआ और इसे दर्शकों का भरपूर समर्थन भी मिला । यह अलग बात है हमारे फिल्मकारों ने कभी नारी को देवी बना दिया तो कभी घर–परिवार व पति के लिए सर्वस्व न्यौछावर कर देने वाली मर्यादा, बलिदान व समर्पण की पुतली के रूप में पेश किया । **'साहिब बीवी और गुलाम'** में उसे घर की छोटी बहू के रूप में सारी सुविधएं देकर अकेले तड़पने के लिए छोड़ दिया तो **'साध्ना'** में बी. आर. चोपड़ा ने औरत ने जन्म दिया मर्दो को, मर्दो ने उसे बाजार दिया' के उद्घोष से उसकी करूण गाथा को पेश किया । ऐसा नहीं है कि हर फिल्मकार ने नारी शोषण के मूल में उसकी व्यक्तित्वहीनता या अबला असहाय होने की प्रतिमूर्ति को ही देखा । इसके विपरीत, कई प्रबु(फिल्मकारों ने पुरूष प्रधन समाज में नारी के दमन, शोषण को बारीकी से पकड़ा।य[5] इस दृष्टिकोण से बनती फिल्मों में धीरे–धीरे समय के साथ और भी बदलाव आते गए जहां समाज में नारी ने अपनी उन मर्यादाओं की रक्षा करते हुए भी आगे बढ़ना शुरू किया वहीं अपने अस्तित्व को भी बनाये रखने का प्रयास किया इसका प्रभाव सिनेमा पर भी पड़ा पिछले कुछ दशकों में अनेक फिल्में इन्हीं विविध् रंगों में सराबोर हुई मिली । फिल्मी नायिकाएं भी एक ही तरह की भूमिकाएं नहीं निभाना चाहती जहां उन्हें फिल्म की कहानी में कुछ नया दिखाई देता है, अपनी भूमिका में दम दिखाई देता है तो वे ऐसी फिल्मों का चुनाव करती हैं फिर चाहे फिल्म हिट हो या ना हो परन्तु वे आत्मसंतुष्टि के लिए ऐसी फिल्में करती हैं । श्रीदेवी एक ऐसी ही अभिनेत्राी रही हैं उन्होंने **नगीना**, **जुदाई** फिर अब **मॉम**, **इंग्लिश विंग्लिश** में अलग–अलग तरह के किरदार निभाये हैं । फिल्म **इंग्लिश विंग्लिश** में उन्होंने ऐसी गृहणी शशि का रोल किया है जो दिखने में तो साधरण सी मध्यवर्गीय औरत है अपने पति, बच्चों के साथ खुशहाल जीवन व्यतीत कर रही है परन्तु वह अपनी इस भूमिका से संतुष्ट नहीं है, वह कम पढ़ी–लिखी है उसके पति सुशिक्षित है, बच्चे अच्छे स्कूल में पढ़ते हैं । शशि हीनभावना की शिकार है कि उसे अंग्रेजी नहीं आती और इस बात के लिए उसके पति और बच्चे अक्सर उसका मजाक उड़ाते हैं और अपने साथ कहीं ले जाने में शर्मिन्दगी महसूस करते हैं ये बात शशि को आत्मग्लानी से भर देती है तब वह अपने घर की चारदीवारी से अपने आत्मबल पर बाहर भी निकलती है अंग्रेजी बोलना सीखती है और अपनी हीनभावना से मुक्ति भी पा लेती है और समाज को यह संदेश देती है कि उम्र, स्थिति या परिवेश जैसा भी हो, परन्तु अगर इंसान कुछ

करने की ठान ले तो कोई भी बाध उसे रोक नहीं सकती । अपना घर–परिवार चलाते हुए भी वह अपने अस्तित्व की रक्षा कर सकती है चाहे इसके लिए उसका साथ कोई दे या ना दे। ये बात उसके हौंसलों को पस्त नहीं कर सकती । फिल्म **'तलाश'** रानी मुखर्जी की मां छवि को प्रस्तुत करती हुई फिल्म है जिसमें उसका पति शेखावत ;आमिर खानद्ध पुलिस ऑफिसर है और एक केस में उलझा हुआ है उध्र वह अपनी पारिवारिक उलझनों में भी फंसा हुआ है क्योंकि उसके आठ वर्षीय बेटे की मौत हो गई है ऐसे में उसकी पत्नी रोशनी ;रानी मुखर्जीद्ध सदमें में है, उसे मानसिक सपोट की जरूरत है परन्तु अपने काम में फंसे होने के कारण वह अपनी पत्नी को ज्यादा समय नहीं दे पाता ऐसे में रोशनी उससे नाराज रहती है उनके आपसी रिश्ते टूटने की कगार पर पहुंच जाते हैं । वैसे तो यह फिल्म एक थ्रिलर मूवी है परन्तु कहानी कोई भी हो स्त्राी के बिना तो वह अधूरी है । इस फिल्म में भी आमिर खान के साथ–साथ रानी मुखर्जी के एक पत्नी और मां के किरदार को बखूबी प्रस्तुत किया गया है ।

2014 में प्रदर्शित फिल्म **'क्वीन'** में रानी ;कंगना रनौतद्ध ने एक अलग ही छाप छोड़ी है जिसमें फिल्म की शुरूआत होती है उसके विवाह से पहले की मेंहदी रस्म से । फिर कहानी में एकदम नया मोड़ आता है जब रानी का होने वाला पति विजय ;राजकुमार रावद्ध शादी से दो दिन पहले यह कहकर अपनी शादी तोड़ देता है कि रानी का रहन–सहन, पहनावा, उसका स्टेटस उसके स्टेटस से मैच नहीं करता इसलिए वह रानी को ठुकरा देता है, तब रानी एक भारतीय अबला की तरह चुपचाप सब कुछ सहन करके आंसू नहीं बहाती बल्कि घर में ही रहने वाली ये लड़की अकेले अपना हनीमून मनाने निकल पड़ती है दुनिया की परवाह किये बिना । अलग–अलग देशों में घूमते हुए उसके व्यक्तित्व के कई रूप दिखाई देते हैं । फिल्म में यह भी दिखाया गया है कि जैसे हमारे भारतीय समाज में लड़कियों को ज्यादा घूमने फिरने की आजादी नहीं है इसलिए पहले हमेशा रानी के साथ उसका छोटा भाई एक गार्ड के रूप में उसके साथ रहता है, भाई भी ऐसा जो शायद मुसीबत में उसकी रक्षा भी न कर पाये । परन्तु इस भारतीय मानसिकता को दिखाया गया है कि हमारे समाज में लड़कियों की रक्षा के लिए कोई न कोई मर्द अवश्य होना चाहिए फिर चाहे उसकी अस्मिता लूटने वाला भी मर्द ही होता है। परन्तु रानी इस सब दकियानूसरी बातों से बेफिक्र अकेली कई जगह घूमती है, होटल में अकेली रूकती है, कार चलाती है, चोर से भी भिड़ती है अनेक लोगों से मिलती है, परन्तु हार नहीं मानती, यहां तक कि उसे होटल का एक कमरा तीन लड़कों के साथ भी शेयर करना पड़ता है परन्तु वह उन लड़कों पर भी भारी पड़ती है । फिल्म में कंगना का अभिनय बहुत ही कमाल का है । उसकी भूमिका विविध्तापूर्ण है । एक तरफ शादी से पहले वह नर्वस, घबराई हुई, और अपने शादी के टूटने से परेशान लड़की दिखाई देती है परन्तु अगले ही पल उसका यह रूप मानो छूमंतर हो जाता है । शादी का टूटना उसे तोड़ने की बजाए आत्मविश्वासी बना देता है और वह पुरानी दुनिया को छोड़ अपनी नई दुनिया को एंजॉय करने के लिए बेध्ड़क अकेले ही निकल पड़ती है यही नायिका दर्शकों पर अपनी छाप छोड़ती है और उसका 'लंदन ठुमकदा' गाने पर लगाये ठुमके याद रह जाते हैं ।

उपसंहार

इस प्रकार 1913 से शुरू हुआ यह सिनेमा का सफर अनेक पडावों को पार करता हुआ सतत उन्नति की और अग्रसर है। अवाक् फिल्मों से होता हुआ यह सफर अब थ्री डी तकनीक से भी आगे पहुँच रहा है। आरम्भ में फिल्मों में अपने अस्तित्व को खोजती नारी आज सिनेमा जगत में अपने अकेले के दम पर फिल्म को सफल कराने का मादा रखती है। यही नहीं हिन्दी सिनेमा की नायिका न केवल बॉलीवुड बल्कि हॉलीवुड में भी अपनी पहचान बनाने में सफल हो गई है। नायक की तरह ही इन नायिकाओं की भी लम्बी फैन लिस्ट है जो कि उनके अभिनय की कायल है। और इन नायिकाओं की अच्छी बुरी सभी प्रकार की बातों का अनुसरण भी करती है। आज फिल्मों में नायिका की स्थिति दोयम दर्जे की नहीं बल्कि उसका अपना स्वतन्त्रा अस्तित्व है। एक जमाने की अबला लाचार सी दिखने वाली नायिका आज सशक्त दमदार अभिनय से दर्शकों को प्रभावित कर रही है, और विश्वभर में अपनी उपस्थिति भी दर्ज़ करा रही है। नारी के इस फिल्मी सफर को देखते हुए यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि पुरूषों की तरह ही धीरे धीरे आने वाले समय में वह अभिनय, निर्देशन, लेखन आदि सभी क्षेत्राों में उनके बराबर अपनी जगह बनाने में सक्षम और सफल होगी यही हमारे भारतीय समाज की मंगल कामना है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

[1]जवरीमल्ल पारख, हिन्दी सिनेमा का समाजशास्त्रा, ग्रन्थ शिल्पी;इंडियाद्ध प्राइवेट लिमिटिड, दिल्ली–110092, पृ. सं. 181 ।

[2] प्रसून सिन्हा, भारतीय सिनेमा एक अनन्त यात्राा, श्री नटराज प्रकाशन, दिल्ली–1100539, पृ. सं. 75 ।

[3] शमीम खान, सिनेमा में नारी, ग्रन्थ अकादमी, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, पृ. सं. 17–18 ।

[4] ापतजपइंपकण्इसवहेचवजण्बवउध्2015ए नारी सशक्तिकरण में सिनेमा का योगदान ।

[5] राजेन्द्र सहगल, सिनेमा : वक्त के आईने में, संजय प्रकाशन, अंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ. सं. 67 ।